

संस्कृत लोक कथा-साहित्य

Dr. Nisha Rani*

PGT Sanskrit, GGSSS, Sisana, Sonipat

भूमिका— लोक (देखना) धातु एवं छञ् प्रत्यय के संघात से 'लोक' का आविर्भाव हुआ है। सभी प्रत्यक्ष लोक है। यही नहीं, लोक भी तीन माने गए हैं और चौदह भी इहलोक परलोक को विषय में पढ़ा व सुना जाता है। पर हमें वायवी लोकोत्तर की अपेक्षा हमारे आसपास के इहलोक की चर्चा ही अभिष्ट है। क्योंकि लोकपद्धति का अनुसर्ता लोकापवाद का पात्र नहीं होता। लोक मर्यादा से प्रतिबद्ध लोकजीवन की यात्रा को सुगम बनाने के लिए अपनाये गए लोक के विविध साधनों में लोक मर्यादा से प्रतिबद्ध लोकजीवन की यात्रा को सुगम बनाने के लिए अपनाए गए लोक के विविध साधनों में लोकगाथा तथा लोककथा का अपना विशिष्ट स्थान है। परम्परा से लोक में गाये जाने वाले गीत को लोकगीत एवं ऐसे ही कथात्मक गीत को लोकगाथा कहते हैं। लोकजीवन का सफल अनुरंजन करने में ये दोनों (लोकगाथा व लोककथा) धाराएं अज्ञात काल से लोक संस्कृति का अविच्छिन्न रूपेण श्रुतिपरम्परया वहन करने में सफल रही है। हमें इन द्रष्टाओं की मेधा का लोहा मानना होगा। जिन्होंने लोकरंजन के ये रसभासित साधन सुलभ किये।

हमें ज्ञात नहीं कि इस सृष्टि का निर्माता कौन है, हमें यह यथार्थ ज्ञान नहीं है कि मानव ने कब व कैसे अपनी जीवन चर्या प्रारम्भ की, तथैव इन लोककथाओं की उद्भावना भी हमारी ज्ञान-सीमा से परे है। अज्ञातकाल से अज्ञातजनों की ये कल्पना प्रसूत परियां अगणित जिह्व्याओं पर थिरकती रही। अनन्तकाल तक पुरखों की वाणी का परवर्ती के निकट आ जाते हैं, दोनों की अभिभूतियां समान प्रभावभरित हो जाती हैं। उस सभ्यता का इस सभ्यता से साक्षात्कार हो जाता है। अनन्तकाल की लोकयात्रा में दोकालानुरूप उनके परिवेश में अन्तर भी आ जाता है। परन्तु तत्त्व अन्ततः वही रहता है। लोक जीवन की उन आदिकथाओं का पल्लवन ही परवर्ती लिखित अथवा अलिखित साहित्य है। चित्र-कल्पना के प्रारम्भिक रूप में गुहाओं की भित्तियों पर प्राप्त होते हैं जो आदिमानव की वास्थली है। उन्ही चित्रों में अंकित वाद्य एवं चित्रों में ही तत्कालीन संगीत-अभिरूचि के भी संकेत प्राप्त होते हैं। इस प्रकार हमें लोकजीवन के आल्हादक तत्व लोककला एवं लोकसंगीत के जीवन्त उदाहरण यह सोचने को बाध्य कर देते हैं कि ये कल्पनाशील मानव की सृष्टि हैं जिसके हाथ विविध चित्र बनाने को आतुर हो उठे, विविध खिलौने बनाने में व्यस्त हो गए। निश्चय ही प्रकृति की चिरन्तन एवं नूतन परिवर्तनशीलता देखकर आल्हाद से मन मचल उठा और स्वतः कण्ठ से निर्झरवत् गान झर पड़े। आपस में मिल बैठे दो-चार वाम्मी ग्रामीण। अपने में से ही किसी अप्रतिम वीर की बात कहने लग गए। उसमें कल्पना का पुट भी आ गया। ये कल्पनाभरित बातें साभिनय व्यक्त होने लगीं। इस अभिनय में ही भावी लोकनाट्यों के बीज छिपे थे जो स्वयं परवर्ती नाट्यों के उत्स हैं।

-----X-----

आदर्श वीर ने गीतों में स्थान पाया गीतों में कल्पना का पुट बढ़ने लगा। विंष्ट शैली में, विंष्ट लय एवं पंक्ति के विंष्ट प्रतिबन्ध के साथ ही वक्तृत्व का परिचय भी दिया जाने लगा। यह भी ज्ञात हुआ कि इन गीतों में यदि निचत गणना के अक्षर हों तो लय की सुरक्षा हो जाती है और उसके साथ ही छन्दोनिर्मिति भी होती गई। ऐसी छन्दोबद्ध वरिगाथाओं के गायक अपनी इस खोज के कारण दृष्टा अथवा ऋषि कहलाए। इनके गतिनायक अतिमानवी देवगण भी बने। इन्होंने इनके आह्वान में स्तुतियाँ भी रची। इनकी वाणी लोकवाणी थी, इनके गीत लोकगीत थे, इनके कथ्य लोककथा बन गए। इन्हे समवेत रूप में ऋक् कहा गया और गेय ऋक् को सम नाम दिया गया। अतः समूचा वैदिक साहित्य परम्परागत लोकसाहित्य है। सीधे-सादे गीतों के परिवेश में साधारण जीवन के तत्कालीन लौकिक भाषा में सरल-सहज हृदयोद्गार निबद्ध कर दिए गए।

ज्ञान की गहन धाराओं में अवगाहन के लिए भी लोकदंनि आवयक माना गया है। चाहे दंनि के क्षेत्र हो अथवा काव्य का, लोकवृत्त के ज्ञान के बिना वह अधूरा है। मम्मट ने भी अपने काव्यप्रकाश में लोकवृत्त, शस्त्र, काव्य आदि के विमर्श से

काव्युत्पत्ति (निपुणता) का होना स्वीकार किया है। अतः ज्ञान की अभिव्यक्ति की जब पहली-पहली किरण फूटी थी, वह वैदिक काल लोकदंनि के बिना अपना अस्तित्व ही कैसे बनाता ? उसमें सर्वथा लोकापेक्षा है।

इस दृष्टि से ऋग्वेद लोक साहित्य का आदिग्रन्थ है। जिसके गीत लोकगीत हैं, जिसकी कहानियाँ लोककथाएँ हैं एवं जिसका दंनि लोकदंनि है। ये लोककथाएँ उपाख्यानों के रूप में सुरक्षित हैं।¹ इन्हे संवाद सुक्त भी कहते हैं। इनमें यम-यमी, उर्वशी-पुरूखम्, सरमा-पणि संवाद विज्ञात हैं। वैसे ऋग्वेद में आख्यानों की कमी नहीं है। कुछ वैयक्तिकदेव देव विषयक हैं तथा कुछ का विषय सामूहिक घटना है। युगान्तर में इन आख्यानों के स्वरूप में परिवर्तन एवं परिवर्धन होता रहा। जिनका ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषद्, सूत्र, निरुक्त, अनुक्रमणी, सायणभाष्य, रामायण, महाभारत, विविधपुराण एवं लौकिक रचनाओं से संक्रमण होता रहा। स्वभावतः युग एवं कालानुरूप उनमें परिवर्तन होता गया। ऋग्वेद में लगभग 30 आख्यानों के स्पष्ट उल्लेख हैं, इन वैदिक आख्यानों के साथ ही दान स्तुतियों में अनेक नृपों के नाम भी मिलते हैं। इन वैदिक

आख्यानों में से प्रख्यात आख्यानों को मूलरूप में कहानी का स्वरूप देने का भी अधुनातन प्रयास हुआ है यही नहीं ऋग्वेदीय आख्यानों को भी परखा गया है। उदाहरणार्थ ऋग्वेदीय उर्वी-पुरुखा के 18 पद्यात्मक सूक्त (10/15)² में एक मर्त्य और एक अप्सरा में परस्पर संवाद होता है। जिसका उन्मलिन शतपथ ब्राह्मण में पैदा होता है। जिसका संक्षेप कृष्ण यजुर्वेद की काठक संहिता³ में प्राप्त होता है। वैदिक आख्यानों के मूलस्वरूप के विषय में भी पाँचाल्य विद्वानों में पर्याप्त मतभेद रहा है। अथर्ववेद में लौकिकता, लोक-विवास और लोकाचार के प्रचुर प्रमाण प्राप्त होते हैं।

यज्ञ अनुष्ठान इत्यादि कर्मकाण्डों की व्याख्या से ब्राह्मण-साहित्य का विषय संबंध है, परन्तु प्रसंगतः किसी समस्या अथवा संस्था का रहस्य समझाने के लिए भी ब्राह्मण उपाख्यानों का आश्रय लेते हैं।

जल प्रलय का उपाख्यान⁴ तो पुरातन है ही, परन्तु शुनः शेष का आख्यान⁵ तो ऐतरेय ब्राह्मण के संकलकों की दृष्टि में भी इतना प्राचीन है कि वह राजसूय का एक अविभाज्य अंग बन गया। ऐतरेय के इस आख्यान की लोककथा कितनी प्राचीन होगी, यह कल्पना से परे की लोक कथा कितनी प्राचीन होगी, यह कल्पना से परे की वस्तु है। यह कथा विजय तथा पुत्रात्पत्ति से भी संबंध है। इन कथा-सन्निवेशों का मुख्याभिप्राय यज्ञ की किसी प्रक्रिया यज्ञ की किसी प्रक्रिया को युक्ति युक्त सिद्ध करना अथवा स्पष्ट करना है। इनमें कुछ कथाएँ यज्ञ भूमिका के स्पष्टीकरण के लिए भी तत्काल निर्मित की गयी हो सकती हैं। ऐसी कथाएँ कथावचक के प्रत्युत्पन्नमत्तित्व का परिणाम है। यथा-मन-वाणी, सोम की चोटी, आदि ऐसी कहानियाँ हैं।⁶ मैत्राण्ण्यी संहिता में पर्वत के पंखों की उत्पत्ति की कथा दी गयी है। शुनः शेष कथावाचक को एक हजार गायें, अध्वर्यु को सौ तथा एक स्वर्णपीठ, होता को दक्षिणा में रजतरथ जिसे खच्चर खींचते हों, देते होते हैं। ये उस समय की प्ररुद्धियाँ हैं जिनका खण्डन असंभव है।⁷

वैदिक युग अन्धविवासों का युग था। शक्ति के सामने सिर झुकना, उसकी अनन्त सत्ता स्वीकार करना तत्कालीन जनता की प्रवृत्ति थी। अतः हमें यह बात स्वीकारने में कठिनाई होगी कि उस युग के किसान, व्यापारी गडरिये और वीर ऐसी अजनबी कहानियाँ न कहते हों। वैदिक वाङ्मय में ऐसे गीतों व कहानियों का संग्रह इसलिए नहीं हो पाया कि ऐसे उपाख्यानों का उपयुक्त स्थान रामायण, महाभारत पुराण आदि थे। अगणित सहस्राब्दियों में प्रवहमान वीरकथाओं का संकलन कर दो महाकाव्य रचे गये-रामायण और महाभारत। ये लोकवाङ्मय और लोकजीवन के स्वाभाविक प्रतिरूप थे। इतिहास और जीवन-कथा भारतीय वाङ्मय के अंग माने गए हैं-यन् भारत तन्न भारते-जो महाभारत में नहीं है, वह भारतवर्ष में नहीं है। महाभारत वस्तुतः भारतीय संस्कृति का कौं⁸ है, जिसके ज्ञान के बिना भारत का ज्ञान अधूरा है। महाभारत भारत का दर्पण है।

भारतीय लोककथाओं की परम्परा अज्ञात काल से आज तक अजस्र चली आ रही है। जिसकी पुष्टि "लोक वेदेय" इस व्यापक सीमा से भी होती है। पार्णिनि और उनके भाष्यकार महर्षि पतंजलि के वेद और लौकिक संस्कृति में अन्तर पर एक ही अनन्त एवं अजस्र संस्कृति के दो खण्ड कर दिये, अपनी सुविधा के लिए। भारतीय-कथाओं ने द⁹न जैसे गहन विषय में स्थान पा लिया। सांख्या के चेतन, पर निर्षक्रिय पुरुष एवं जड़ परन्तु चेतनवत् सक्रिय प्रकृति दोनों के पंग्वन्धवत् एक-दूसरे के सहयोग से सृष्टि होती है। यह अन्ध-पंगु की कथा लोक से ली गई

प्रतीत होती है। उपमान सदा शा¹⁰वत एवं सर्वविख्यात होता है, अतः ईसवी पूर्व से न जाने कितनी सदियों पूर्व से यह कहानी जनजीवन में घुलमिल गयी प्रतीत होती है जिससे आज का प्रत्येक प्रबुद्ध नागरिक सुपरिचित है। वेदान्त में प्रयुक्त "द¹¹मस्त्वमसि" भी ऐसा ही लोकाख्यान है। इसी प्रकार अर्धजरती, काकतालीय कूर्ममण्डूक, दण्डापूप, इत्यादि न्याय भी लोक-कथाओं के संकेतक ही हैं। अतः लोक-कथाएँ दे¹²ना-काल की सीमा से नहीं बांधी जा सकती हैं।

जैसा की पहले कहा जा चुका है, कालिदास की विक्रमोर्व¹³णीय प्राग्वैदिक युगीन कथा की ही चरम रमणीय परिणति है एवं अभिज्ञान शाकुन्तलम् भी महाभारतीय लोक-कथात्मक उपाख्यान का मनोरम संस्करण है। रघुव¹⁴ना में रामायण एवं महाभारत के लोकप्रिय कथानक को अपनाया गया है जिसका मूलाधार भी संभवतः पुरातन काल से आ रही लोककथाएँ रही होंगी।¹⁵ परवर्ती कादम्बरी और द¹⁶नाकुमार चरितम् इत्यादि के उपजीव्यभी लोककथामूलक ही प्रतीत होते हैं। तथैव भासकृत चारुदत्त एवं अविमारक नाटक भी अनुश्रुति एवं लोककथाओं के आधार पर ही रचे गये हैं। उदयन कथा, बौद्ध जैन तथा ब्राह्मण साहित्य में समान रूप से पायी जाती हैं।

िाक्षाप्रद नीतिकथाएँ यहां प¹⁷नु-पक्षियों के माध्यम से कही जाती हैं। संस्कृत में पंचतंत्र की कथाएँ कुछ ऐसी ही हैं। पंचतंत्र ने भारतीय वाणी को वि¹⁸वव्यापी बना दिया है। इस प्रकार पंचतंत्र व अन्य भारतीय कहानियाँ वि¹⁹व के उत्तर भागों के निवासियों को भी आनन्दविभोर करती रही हैं। 14वीं सदी के लगभग बंगाल नृपधवलचन्द्र के आश्रित कवि नारायण पण्डित ने पंचतंत्र का आधार पर एक लोकप्रिय कथाग्रंथ 'हितोपदे'²⁰ना की रचना की। इसकी आधी कहानियाँ पंचतंत्र से ली गयी हैं। इसमें मित्रलाभ, सुहृदयभेद, विग्रह एवं सन्धि चार परिच्छेद हैं। ये परी एवं प²¹नु कथाएँ युगों से भारतीय लोककथाओं का स्पन्दन कर रही हैं। ऊपर से जो केवल परिकथाओं का संग्रहमात्र लगती हैं, स्वयं भारतीय उसे युगों से नीति²²नास्त्र एवं धर्म²³नास्त्र के संग्रह के रूप में स्वीकृत करते आये हैं।

वस्तुतः भारत परिकथा, प²⁴नुकथा एवं पक्षीकथा की मूल भूमि है। लोककथाओं का इन वस्तुओं से घना संबंध है। तत्संबंध साहित्य परवर्ती युग में कितना ही उपचित होता गया। प्राचीन युग के भारतीय रसिक आख्यानकार थे जिसका रसभरित आख्यान-साहित्य और वि²⁵षतः प²⁶नुकथा-साहित्य यूरोपीय आख्यान-साहित्य का उपजीव्य रहा। पै²⁷नाची भाषा में लिखी हाल (दूसरी सदी) के आश्रित कवि गुणादय की बृहत्कथा भारतीय कथाको²⁸ना है। इसमें परम्परा से प्राप्त लोककथाओं को लोकभाषा प्राकृत में प्रस्तुत करने का सफल प्रयास हुआ है। लुप्त होने के कारण मूल कथा से हम अपरिचित हैं, परन्तु मूल का संस्कृत अनुवाद करने की प्रतिज्ञा कर तीन विद्वानों द्वारा तीन विभिन्न संस्करण प्रस्तुत किये हैं जिनके आधार पर मूलग्रंथ के विषय में ज्ञान प्राप्त हो जाता है। ये तीन संस्करण हैं-

1. 9वीं सदी के बुधस्वामीकृत बृहत्कथा श्लोक संग्रह
2. क्षमेन्द्रकृत 7500 श्लोकात्मक बृहत्कथामंजरी
3. सेमदेवकृत कथासरित्सागर

जिसमें 2400 श्लोक हैं। मूल बृहत्कथा से उपर्युक्त के अतिरिक्त बाण, दण्डी, सुबंध, त्रिविक्रमभट्ट, भोज आदि परिचित थे, जिसके मूल उद्धरण हमें भोज के सुप्रसिद्ध ग्रंथ श्रृंगार-प्रकाश में प्राप्त हो सकते हैं। कथाओं का यह पुरातन संग्रह रामायण-महाभारत के समान भारतीय कथा-काव्यों का उपजीव्य रहा है। इनकी कथाओं में सर्वत्र विचित्रता है। इसमें पञ्च-पक्षियों का समावेश है। उदयनपुत्र नरवाहनदत्त इसका नायक है। बाण, दण्डी, सुबन्धु, भवभूति, हर्ष, भोज इत्यादि कितने ही कथाकार इस कृति के ऋणी हैं।

विचित्र लोककथाओं का साहित्यिक संस्करण दशकुमार चरितम् है। उदयन के समान शूद्रक भी लोककथाओं का नायक बन गया था। लीलावती, अनंगवती, चित्रलेखा, गोरोजना इत्यादि अनेक कथाओं का उत्स लोककथाओं में ही रहा होगा। ये कृतियाँ आज अनुपलब्ध हैं। भोजराज की श्रृंगार मंजरी कथा में श्रृंगारपरक 13 कहानियाँ संकलित हैं। इनका संकेत बृहत्कथा-लोक संग्रह में नहीं है अतः निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता है कि ये कथाएँ बृहत्कथा का अंग रही थीं अथवा नहीं। चित्त विनोद के लिए ही शुकसप्तति की भी रचना हुई। इसमें एक शुक प्रोषितपतिका को प्रतिरात्रि एक-एक कहानी सुनाकर 70 रात तक उसे व्यभिचारिणी होने से बचाता है। कथाएँ सभी ऐसी व्यभिचारिणियों की हैं। जिनका अन्ततः परिणाम प्रतिकूल निकलता है। अन्तिम दिन उसका पति वणिक आ जाता है।⁹

उपसंहार

इन शिक्षाप्रद कथाओं में लोकजीवन एवं संस्कृति का सच्चा स्वरूप प्राप्त होता है। वैसे विविध विद्वानों ने लोककथाओं के विविधरूप सुझाये हैं। इन वर्गीकरणों के अनुसार ही इन लोककथाओं की विभाषणाएँ भी हैं। इन कथाओं में अपने-अपने समय में प्रचलित लोकविवासों का भी पर्याप्त पुट है। डॉ० सत्येन्द्र ने इनके आठ रूप स्वीकार किये हैं, तो श्री गणेश चौबे ने 13 रूप स्वीकारे हैं। संस्कृत की अपार लोककथा राशि को यदि हम विषमगत वर्गीकृत रूप में देखना चाहें तो ये विभाग संभव होंगे—

1. प्रकृति देवता के मानवीकरण से संबंध होंगे
2. पञ्च-पक्षी संबंध कथाएँ
3. भूत पिशाच-राक्षस की कथाएँ
4. यौन कथाएँ
5. प्रहेलिकागत कथाएँ
6. ऋषि कथाएँ
7. जाति एवं बन्धुकथाएँ
8. उपदेश कथाएँ
9. जाति रहस्यविद्या कथाएँ
10. देवता एवं अप्सरा से संबंधित कथाएँ
11. ऐतिहासिक कथाएँ

12. पर्वत तथा नदियों से संबंधित कथाएँ
13. उदयन, शूद्रक, भोज से संबंधित कथाएँ
14. उदाहणात्मक कथाएँ
15. नीतिगत कथाएँ
16. वैत्रिण्य कथाएँ
17. प्रचलित न्यायगत कथाएँ
18. उपहास कथाएँ

इसके अतिरिक्त विभेदों की संभावना भी निरस्त नहीं की जा सकती। इन वर्गीकरणों के अनुसार ही लोककथाओं की विभाषणाएँ भी हैं। राजाभोज ने कथाओं का वर्गीकरण इस प्रकार किया है—आख्याचिका, उपाख्यान, आख्यान, निदर्शन, प्रवल्हिका, मन्थमल्लिका, मणिकुल्या, कथा, परिकथा, एवं कथानिका को ही उपाख्यान कह दिया है, जो समुचित नहीं हैं भोजकृत विभाजन अत्यन्त व्यापक एवं सूक्ष्म है। कथाविषयक इतना सूक्ष्म विभाजन न इससे पूर्व हुआ एवं न बाद में। इसलिए भोज ने काव्यभेदों में श्रृंगार प्रकाश को साहित्य प्रकाश कहा है।¹⁰ संस्कृत लोककथाएँ निश्चय ही इन विविध रूपों ज्ञात-अज्ञात अनगिनत कवियों द्वारा सदियों तक कही गयीं। जिनमें से अधिकांश का लोप हो गया। फलतः कतिपय से ही हमें संतोष करना पड़ रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची—

बलदेव उपाध्याय, वैदिक कहानियाँ।

ऋग्वेद शूक्ल—10/15

कृष्ण यजुर्वेद काठक संहिता (3/4/8/10)

शतपथ ब्राह्मण—(7/13/18)

ऐतरेय ब्राह्मण— (7/13/18)

शतपथ ब्राह्मण, (1/4/5/8-12) (3/2/4/2-6)

मैक्डानल, वैदिक माइथालॉजी।

द. गो. लिमये, भारतीय उपाख्यान एवं महाभार।

शुकसप्तति

श्रृंगार प्रकाश तथा राघवन का भोजराज श्रृंगारप्रकाश, अध्याय 11 एवं 12

Corresponding Author

Dr. Nisha Rani*

PGT Sanskrit, GGSSS, Sisana, Sonipat

E-Mail – nishashashi00@gmail.com